शैव-दर्शन का मुख्य प्रसिद्ध ग्रंथ शिव-सूत्र
(हिन्दी दोहों में रूपान्तरन)

रूपान्तरकार
योगेन्द्र तिक्कू

गुरू वर्य ब्रह्म वादिनी
सुश्री शारिका देवी जी
को समर्पित

ऐसा करने पर तुम बौद्धों के साथ वाद-विवाद करो और उन्हें सत्तर्क के सहारे कशमीर-मंडल से निकाल दो। शंकर के आदेशानुसार वसुगुप्त जी ने वैसा ही किया। बौद्धों से शास्त्रार्थ करके उन्हें यहां से भगा दिया। श्री क्षेमराज जी ने शिव-सूत्र की टीका के प्रारम्भ में संस्कृत में ही इस कथा का वर्णन किया है।

हमारे आराध्यदेव श्री गुरूदेव ईश्वर-स्वरूप जी ने मुझे तथा ब्रह्मलीन श्री शारिका देवी जी को कई बार इस ग्रन्थ को पढाया है। ठाकुर जयदेवसिंह, डा. सिलबरन तथा अन्य पाश्चात्य देश वासियों को भी पढाया है। इस ग्रन्थ का उल्था स्वयं आंगल-भाषा में भी किया। किन्तु आज तक हिन्दी भाषा में इस का रूपान्तरण किसी ने नही किया। इस की पूर्ति श्री योगी जी द्वारा संभव हुई है। अतः इन को हार्दिक आशीर्वाद देते हुए मन प्रसन्न हो रहा है।

श्री योगी जी तिक्कू ब्रह्मवादिनी सुश्री शारिका देवी जी के सत्-शिष्य हैं। इतनी अल्पायु में ही इन्होंने शैव- शास्त्र के कई ग्रन्थ पढ़े। एक सफल गायक तथा अभिनेता होकर भी इन्हें गुरूजनों का

आशीर्वाद सदा सहायक रहा। श्री पूज्य गुरूवर्य ईश्वर-स्वरूप जी के भी ये स्नेह पात्र रहे हैं।

मैंने इन की यह पुस्तक आद्योपान्त पढ़ी। शिव-सूत्र के सार-गर्भित अर्थ की प्रतिछाया इन दोहों में स्पष्ट दिखती है। कई सूत्रों का तो भाव-ग्रहण किया गया है और कई सूत्रों का अर्थ अक्षरशः सूत्र के अनुकूल ही दोहों में उभर आया है। आजतक इन सूत्रों का हिन्दी भाषा में इस प्रकार का प्रयास किसी ने नही किया है। अतः यह प्रयास अति प्रशंसनीय है। अनुमान किया जाता है कि इन्हें गुरूजनों का आशीर्वाद सहायक है तभी तो इतने सार-गर्भित ग्रन्थ का नपे-तुले दोहों में अनुवाद कर पाये हैं। गुरूजनों का वरद-हस्त इन का सदा सहायक रहे।

शुभाशीर्वाद देते हुए
प्रभा देवी
ईश्वर-आश्रम
श्रीनगर
२६ अगस्त २०१० निशात

ॐ

परभैरवलीन्यै पराशक्तयै श्री शरिका देव्यै नमो नमः

ॐ श्री गुरवे नमः

ना कुछ जानूँ लिखना पढ़ना, ना कुछ बुद्धि मोरी,
जो लिखवाया सो ही लिखा, सब करनी है तोरी।।०।।

हृदय उद्गांर

"शिव सूत्र" - कश्मीर शैव दर्शन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अग्रणी ग्रन्थ है। स्वयं आशुतोष भगवान शिव द्वारा रचित् इस महान ग्रन्थ के एक एक सूत्र में आत्म रस का विशाल सागर हिलोरें ले रहा है।

हमारे पूर्वज शैव गुरूओं ने इन सूत्रों का विवेचन कर के, अनुयायिओं पर महती कृपा करी है। परन्तु कश्मीर शैवी दर्शन के गुरूओं की श्रंखला में अन्तिम गुरू प्रातः स्मरणीय शैवाचार्य परम पूज्यनीय श्री लक्ष्मण जू (जिन्हें हम सादर श्री ईश्वर स्वरूप जी कहते हैं) ने, इस महान ग्रन्थ का अर्थ, कृपा पूर्वक शिष्यों तक पहुँचाया है।

मेरे गुरूदेव की कृपा से, मेरे मन में भाव जाग्रत हुआ कि, श्री ईश्वर स्वरूप जी द्वारा समझाये अर्थ का अवलम्बन लेकर, शिवसूत्र के अर्थ का, हिन्दी दोहान्तरण करना चाहिए, ताकि इन सूत्रों में छिपे अनमोल, ज्ञानकोष का लाभ, अधिक से अधिक भक्त उठा सकें।

मेरी तो न बुद्धि है, ना ही शक्ति थी, कि मैं इस कार्य का बीड़ा उठा पाता। गुरूदेव, परभैरव लीनी, स्वयं पराशक्ति देवी शारिका जी ने ही प्रेरणा दी, शक्ति दी तथा भक्ति दी कि यह कार्य सम्पन्न हो सका।

भय था कि कहीं, मेरे द्वारा, त्रुटि ही न हो जाए तथा इस महान ग्रन्थ का निरादर हो जाय। अतः तीन चार सूत्रों का दोहान्तरण करके, पूर्ण विद्यावतार, शक्ति स्वरूपा देवी प्रभा जी को दिखाया। उन्होंने जब हामी भरी तथा आज्ञा दी कि आगे बढ़ो, तभी साहस कर के शनैः शनैः आगे बढ़ता गया। जब दीप लिए स्वयं गुरूदेव, मार्ग प्रर्दशित कर रहे हों, तो चलने में भला क्या कठिनाई हो सकती है।

लेखनी स्वयं ही शब्द उडेलती रही। कभी कभी उनका मन नहीं होता था, तो शब्द नहीं निकलते थे। लेखनी हाथ में ही निःशब्द रह जाती थी। मैं गुरूदेव की तस्वीर देख कर मुस्करा देता तथा लेखनी रख देता था। कुछ दिन पश्चात्, अकस्मात् ही पुनः भाव जाग्रत होते तथा लेखनी चल पड़ती।

पूज्यनीया शक्ति स्वरूपा देवी प्रभा जी ने, इस लेखन कार्य पर कृपा दृष्टि डाल कर तथा आवश्यकतानुसार संशोधन कर के इन दोहों को और सबल कर दिया। यदि इन में फिर भी कोई त्रुटि शेष रह गई हो तो वह मेरे ही अज्ञान वश होगी। उसका भार मेरे ही सर रहेगा।

आशा है, पाठकगण, भक्तजन, भूलों को क्षमा कर, इन दोहों से लाभ प्राप्त करेंगे।

सधन्यवाद

गुरू अनुग्रह प्रार्थी

योगेन्द्र तिक्कू

शिव सूत्र

सकल जगत आधार, विश्व में तुम ही व्यापे,
भैरव तुम ही, और तुम्हीं से भय है काँपे।।०।।

आत्मज्ञान हेतु योगी, सब तुमको ध्यायें,
तुम ही शीश में, और तुम्हें ही शीश नवायें।।०।।

हो वंदन स्वीकार चरण में, इस रज का,
करो कृपा मैं रहूँ कीच में, एक जलज सा।।०।।

प्रथम उन्मेष
शाम्भव-उपाय

चैतन्यमात्मा ।।१।।

चेतनता ही आत्मा है,
तुम चेतन को ही शिव जानो,
विश्वरूप चेतनता ही है,
जगत को ही पहचानो ।।०।।

ज्ञानं बन्धः - ।।२।।

द्वैत भाव शिव और जगत का,
यदि समझे तो बंधन है,
चितप्रकाश से भिन्न नही कुछ,
ना समझे तो बंधन है ।।०।।

योनिवर्गः कलाशरीरम् - ।।३।।

यह शरीर यह कर्म है मेरा,
है माया का ये बंधन,
माया कर्म और आणव मल ही,
समझो जीवन का बंधन ।।०।।

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तभेदे तुर्याभोगसंभवः - ।।७।।

ऐसा योगी जो उद्यम कर,
भीतर ही जग को पाता,
जाग्रत, स्वप्न, सषुप्ति स्थिति में,
तुर्या को संभव पाता ।।०।।

ज्ञानं जाग्रत - ।।८।।

बाह्येन्द्रिय से बाह्य् जगत का ज्ञान,
अवस्था जाग्रत की,
योगी की अविकल्प धारणा,
स्थिति अवस्था जाग्रत की ।।०।।

स्वपनो विकल्पाः - ।।९।।

मन से जनित विकल्प जहाँ,
वह स्थिति है स्वपनावस्था की,
योगी केन्द्रित करे विचार,
तो स्थिति है स्वपनावस्था की ।।०।।

अविवेको माया सौषुप्तम् - ।।१०।।

अज्ञान बने अविवेक जहाँ,
है माया जनित सुषुप्ति वही,
जब अविकल्प समाधि में योगी,
उसकी समझ सुषुप्ति वही ।।०।।

त्रितयभोक्ता वीरेशः - ।।११।।

तीनो स्थितियों में तुर्या का,
अनुभव जो योगी करता,
सर्वऐन्द्रीय शक्तियों का,
वह योगी है स्वामी बनता ।।०।।

विस्मयो योगभूमिकाः - ।।१२।।

जैसे अद्भुत वस्तु देखकर,
मानव है विस्मित होता,
वैसे ही योगी अद्भुत,
अनुभव से है विस्मित होता ।।०।।

इच्छा शक्तिरुमा कुमारी - ।।१३।।

भैरव रूप में योगी की,
इच्छा शक्ति है परा शक्ति,
उमा कुमारी की भांति,
शिव भाव में है विचरण करती ।।०।।

दृश्यं शरीरम् - ।।१४।।

है दृश्यमान जग तब दिखता,
उस योगी को, अपना तन ही,
मेरा ही विस्तार सकल जग,
स्थूल, सूक्ष्म, जड़, चेतन भी ।।०।।

हृदये चित्तसंघट्टाद्दृश्यस्वापदर्शनम् - ।।१५।।

कर एकाग्र चित्त को,
ध्यान धरे संवित् प्रकाश में वो,
अनुभव करता स्वयं को ही,
घर पट, जल थल, आकाश में तो ।।०।।

शुद्धतत्वसंधानाद्वाऽपशुशक्तिः - ।।१६।।

सकल जगत है रूप परमशिव का,
जो शुद्ध तत्व ही है,
प्राप्त करे जब अहं रूप में विश्व,
तो वो शिवत्व ही है ।।०।।

विर्तकः आत्मज्ञानं - ।।१७।।

मैं ही शिव हूँ, वही विश्व है,
सतत् ध्यान में जो धरता,
ऐसा योगी हर विचार संग,
आत्मज्ञान में ही रहता ।।०।।

लोकानन्दः समाधिसुखम् - ।।१८।।

योगी जब अन्तर्मुख हो कर के,
समाधि सुख प्राप्त करे,
लोकेश्वर हो कर स्वदेह में,
जगदानन्द को प्राप्त करे ।।०।।

शक्तिसन्धाने शरीरोत्पत्तिः - ।।१९।।

परकल्याण हेतु यदि योगी,
शक्ति का संधान करे,
हर इच्छा साकार हो उठे,
यदि योगी ऐसा चाहे ।।०।।

भूतसंधान-भूतपृथ्कत्व-विश्वसंघट्टाः - ।।२०।।

अपनी इच्छाशक्ति द्वारा,
दुःख, कष्ट, हर ले, धर ले,
देश, काल से मुक्त वो,
भूत भविष्य को ही वश में कर ले ।।०।।

शुद्धविद्योदयाच्चक्रेशत्वसिद्धिः - ।।२१।।

उदय शुद्ध विद्या का हो,
तो योगी जगदीश्वर होवे,
करे विहार शक्तिचक्रों में,
योगी चक्रेश्वर होवे ।।०।।

महाहृदानुसन्धानान्मंत्रवीर्यानुभवः - ।।२२।।

ध्यान लगा संवित् सागर में,
योगी जब अन्तर्मुख हो,
पाये शब्दराशि की शक्ति,
अनुभव मंत्रवीर्य का हो ।।०।।

द्वितीय उन्मेष
शाक्त-उपाय

चित्तं मन्त्रः - ।।१।।

जो योगी चेतन रह कर,
अनवरत अहं में लीन रहे,
उसका चित्त ही मन्त्र रूप बन,
सतत् मनन में लीन रहे ।।०।।

प्रयत्नः साधकः - ।।२।।

करे प्रयत्न निरंतर योगी,
थामे चेतनता की डोर,
चेतन रह कर साधक पहुँचे,
निर्विकल्प चेतन की ओर ।।०।।

विद्याशरीरसत्ता मन्त्ररहस्यम् - ।।३।।

शिव से शक्ति विलग नहीं,
और शक्ति है मंत्रों का आधार,
यही शुद्ध विद्या की सत्ता,
मंत्र में करे शक्ति संचार ।।०।।

गर्भे चित्तविकासोऽविशिष्टविद्यास्वपनः - ।।४।।

शिव की शक्ति, महामाया में घिर कर,
योगी भ्रमित रहे,
माया जनित प्रपंच में उलझा,
परम लक्ष्य से दूर रहे ।।०।।

विद्यासमुत्थाने स्वाभाविके खेचरी शिवावस्था - ।।५।।

क्षोभ रहित हो कर योगी,
जब कण कण में अनंत देखे,
रहे खेचरी मुद्रा में स्थित वो,
शिव सम ही, सम होके ।।०।।

गुरूरुपायः- ।।६।।

शिव का रूप स्वयं गुरू है,
और शिवता का है उपाय गुरू,
पथिक, मार्ग, गन्तव्य, मार्गदर्शक,
हर रूप में आप गुरू ।।०।।

मातृकाचक्रसंबोधः - ।।७।।

गुरू कृपा से ज्ञात हो सके,
अ से क्ष तक का विस्तार,
यही मात्रिका चक्र, शक्ति शिव की,
जो है जग का आधार ।।०।।

शरीरं हविः - ।।८।।

करता त्याग प्रमेय भाव का,
रह कर जो योगी चेतन,
अहंभाव सूक्ष्मादि शरीर का,
करे चिदाग्नि में वो अर्पण ।।०।।

ज्ञानमन्नम् - ।।९।।

चितस्वरूप में रम कर,
चेतन होकर ध्यान लगाये जो,
द्वैताद्वैत जनित,
अज्ञान और ज्ञान का भोग लगाये वो ।।०।।

विद्यासंहारे तदुत्थस्वप्नदर्शनम् - ।।१०।।

चेतनता अस्थिर होवे तो,
योगी की समाधि टूटे,
पहुँचे स्वपनावस्था में और
शुद्धज्ञान की लय टूटे ।।०।।

तृतीय उन्मेष
आणव-उपाय

आत्मा चित्तम् - ।।१।।

चितस्वरूप से गिर कर मानव,
चित्त रूप में जब अटके,
मन, बुद्धि और अहंकारवश,
सतत् योनि योनि भटके ।।०।।

ज्ञानं बन्धः - ।।२।।

मन, बुद्धि से जुड़े अहं जब,
सत्व, रजस, तम गुण उपजे,
ज्ञान सभी अज्ञान बने तब,
प्राणी बंधन में उलझे ।।०।।

कलादीनां तत्त्वानामविवेको माया - ।।३।।

कला, काल, रागादि तत्व से,
जब प्राणी मोहित होवे,
द्वैत भाव के दंश से तब वो,
जन्माजन्म ग्रसित होवे ।।०।।

शरीरे संहारः कलानाम् - ।।४।।

करे समाहित एक दूजे में,
सभी कलाऐं जब योगी,
छत्तीस तत्वों को लय कर के,
जा पहुँचे शिव तक योगी ।।०।।

नाडीसंहार-भूतजय-भूतकैवल्य-भूतपृथकत्वानि - ।।५।।

प्राणापान, मध्य में लय कर,
महाभूत जय करता जो,
करके प्रत्याहार,
महाभूतों से विलग ही रहता वो ।।०।।

मोहावरणात्सिद्धिः - ।।६।।

माया के आवरण से बहुविध,
सिद्धी प्राप्त करे साधक,
यही सिद्धियाँ बन जाती हैं,
शिव चेतनता में बाधक ।।०।।

मोहजयादनन्ताभोगात्सहजविद्याजयः - ।।७।।

जब संस्कार मिटें मन के,
तब विजय मोह पर संभव हो,
आत्म व्याप्ति से बढ़ कर आगे,
शिव व्याप्ति का अनुभव हो ।।०।।

जाग्रत्द्वितीयकरः - ।।८।।

ऐसा योगी सर्वजगत् में,
जब शिव चेतनता देखे,
जाग्रत आदि अवस्थाऐं,
चेतन का ही विस्तार बनें ।।०।।

नर्तकः आत्मा - ।।९।।

विश्व मंच है, शिव अभिनेता,
भिन्नाभिन्न रूप धरता,
सुख दुख आदि रसों का अभिनय,
योगी चेतन रह करता ।।०।।

रङ्गोऽन्तरात्मा - ।।१०।।

अन्तर्आत्मा का अभिनय,
प्रत्येक अवस्था में चलता,
जगत रूप के रंगमंच पर,
निर्गुण, सगुण रूप दिखता ।।०।।

प्रेक्षकाणीन्द्रियाणि - ।।११।।

सभी इन्द्रियां योगी की,
प्रेक्षक होती हैं नाटक की,
योगी रहता विलग तथा
इन्द्रियां रसास्वादन करती ।।०।।

धीवशात् सत्वसिद्धिः - ।।१२।।

परम कुशाग्र बुद्धि पाकर,
योगी जग नाटक में रमता,
कलाकार की भांति,
बुद्धिपूर्वक, सात्विक अभिनय करता ।।०।।

सिद्धः स्वतन्त्रभावः - ।।१३।।

योगी जो हो सजग,
रहे स्वातंत्रभाव में वो प्रतिक्षण,
सकल जगत आधीन रहे,
और वश में उसके जड़ चेतन ।।०।।

यथा तत्र तथान्यत्र - ।।१४।।

स्वतंत्रता का अनुभव जब,
योगी समाधि में है करता,
बहिर्मुखीन अवस्था में भी,
वह स्वतंत्र ही है रहता ।।०।।

बीजावधानम् - ।।१५।।

प्रस्फुटित सृष्टि का बीजरूप,
स्वातन्त्रय शक्ति ही शिव की है,
अवरोध रहित धर ध्यान उसी पर,
पराशक्ति जो शिव की है ।।०।।

आसनस्थः सुखं हृदे निमज्जति - ।।१६।।

सुखासीन हो कर के योगी,
जब समाधि सुख में डूबे,
श्रमविहीन, स्वच्छंद लगाये,
अमृत सागर में गोते ।।०।।

स्वमात्रानिर्माणमापादयति - ।।१७।।

कर सकता निर्माण जगत में,
योगी इच्छा के अनुरूप,
दे कर निज चेतनता को ही,
स्थूल सूक्ष्म इत्यादि स्वरूप ।।०।।

विद्याऽविनाशे जन्मविनाशः - ।।१८।।

रहे शुद्ध विद्या में स्थित,
तो योगी सब में शिव देखे,
दूर अविद्या का तम हो और,
जन्म मरण का बंध कटे ।।०।।

कर्वगादिषु माहेश्वर्याद्या पशुमातरः - ।।१९।।

शिव स्वातंत्र शक्ति ही लेती,
रूप मात्रिका शक्ति का,
पशुपाश में धर लेती ये,
ह्रास हो यदि चेतनता का ।।०।।

त्रिषु चतुर्थं तैलवदासेच्यम् - ।।२०।।

तुर्यावस्था, आदि अंत में,
सभी अवस्थाओं के है,
तेल की भांति, मध्य में भी,
उसका प्रसरण आवश्यक है ।।०।।

मग्नः स्वचित्तेन प्रविशेत् - ।।२१।।

छोड़ क्रियाऐं श्वास आदि की,
स्थूल से बढ़ो सूक्षमतम को,
अन्तर्मुख एकाग्रचित्त हो,
चेतन में ही लीन रहो ।।०।।

प्राणसमाचारे समदर्शनम् - ।।२२।।

शनैः शनैः जब श्वास का प्रसरण,
भीतर से बाहर को हो,
बहिमुर्खीन अवस्था में भी,
आत्मानन्द का अनुभव हो ।।०।।

मध्ये ऽवरप्रसवः - ।।२३।।

बाहर निकल समाधि से,
जग के कार्य कलापों में फँसता,
मध्य में सभी अवस्थाओं के,
तुर्या भोग नहीं करता ।।०।।

मात्रास्वप्रत्ययसंधाने नष्टस्य पुनरूत्थानम् - ।।२४।।

भीतर से बाहर आकर,
योगी है निज स्वरूप खोता,
किन्तु प्रयत्न से, जग में शिव ही देख,
पुनः चेतन होता ।।०।।

शिवतुल्यो जायते - ।।२५।।

तुर्य विजय कर,
तुर्यातीत अवस्था में है जो रहता,
वह योगी मानव शरीर में भी,
शिव सम हो कर रहता ।।०।।

शरीर वृत्तिर्व्रतम् - ।।२६।।

योगी शिव समान जो होता,
शैवी भाव में ही रहता,
दिखता साधारण मानव सा,
देह धर्म पालन करता ।।०।।

कथा जपः - ।।२७।।

सकल जगत शिव रूप में देखे,
अहंभाव में स्थित है जो,
कायिक कार्य कलाप में समझो,
मन्त्रोच्चार ही करता वो ।।०।।

दानमात्मज्ञानम् - ।।२८।।

जब तक देह में रहता योगी,
अहं विमर्श में स्थिर रहे,
शिष्य सुपात्र, सुयोग्य देख कर,
आत्मज्ञान का दान करे ।।०।।

योऽविपस्थो ज्ञाहेतुश्च - ।।२९।।

सभी इन्द्रियाँ वश में उसके,
शक्ति चक्र जो जय करता,
दीक्षा परम ज्ञान की,
शिष्यों को, वह योगी दे सकता ।।०।।

स्वशक्तिप्रचयोऽस्यविश्वम् - ।।३०।।

शिव से शक्ति, शक्ति से जग,
विलग नहीं होता जैसे,
वैसे योगी को जग,
अपनी शक्ति का विस्तार लगे ।।०।।

स्थितिलयौ - ।।३१।।

सृष्टि, स्थिति, लय, को बांधे है,
डोर एक चेतनता की,
शुद्ध ज्ञान की डोर न छूटे,
योगी की, लय दशा में भी ।।०।।

तत्प्रवृत्तावप्यनिरासः संवेत्तृभावात् - ।।३२।।

यद्यपि रहता है संलग्न,
सृष्टि इत्यादि दशाओं में,
तदपि स्वभाव में चेतन रह कर,
विलग है सर्व क्रियाओं से ।।०।।

सुखदुःखयोर्बहिर्मननम् - ।।३३।।

अंतर में ही स्थित सदैव,
एकात्म विशुद्ध ज्ञान में जो,
सुख दुःख को बस बाह्य जगत का खेल
ही समझे योगी वो ।।०।।

तद्विमुक्तस्तु केवली - ।।३४।।

सुख दुःखादि द्वैत भावों से,
रहता है जो परे परे,
द्वैत नहीं जग, केवल मैं हूँ,
इसी भाव से जुड़ा रहे ।।०।।

मोहप्रतिसंहतस्तु कर्मात्मा - ।।३५।।

मोह पाश में बंध अज्ञानी,
द्वैत भाव में उलझे जो,
सुख दुःख के जंजाल में घिर कर,
कर्म जाल में फंसता वो ।।०।।

भेदतिरस्कारे सर्गान्तर कर्मत्वम् - ।।३६।।

पदच्युत योगी पुनः अनुग्रह,
ईश्वर का जब प्राप्त करे,
पहुँचे पुनः प्रमातृभाव में,
चितस्वरूप जब ध्यान धरे ।।०।।

करणशक्तिः स्वतो ऽनुभवात् - ।।३७।।

साधारण मानव भी स्वप्न में,
कर सकता निर्माण सभी,
इच्छा को साकार कर सके,
जाग्रत रह कर भी योगी ।।०।।

त्रिपदाद्यनुप्राणनम् - ।।३८।।

तुर्या की दृढ़ थामे डोर,
समाधि से जब बाहर आवे,
योगी, सृष्टि, स्थिति और लय में,
तुर्या का ही सुख पावे ।।०।।

चित्तस्थितिवच्छरीरकरणबाह्येषु - ।।३९।।

समावेश तुर्या का कर,
सब बाह्य क्रियाओं में योगी,
बहिर्मुखीन अवस्था में भी,
तुर्या सुख पाये योगी ।।०।।

अभिलाषाद्बहिर्गतिः संवाह्यस्य - ।।४०।।

माया कंचुक के प्रभाव से,
पूर्ण स्वरूप से जो भटके,
इच्छाऐं जाग्रत हो भीतर,
जन्म मरण में वो अटके ।।०।।

तदारूढप्रमितेस्तत्क्षयाज्जीवसंक्षयः - ।।४१।।

स्वात्मभाव में निरत रहे जो,
वो पशु पाश से मुक्त रहे,
अभिलाषाऐं क्षय हों उसकी,
जन्म मरण का बंध कटे ।।०।।

भूतकंचुकी तदा विमुक्तो भूयः - ।।४२।।

पंचतत्व आवरण हैं उसके,
धारण उनको ना करता,
हो विमुक्त रहता शरीर से,
किन्तु शरीर में है दिखता ।।०।।

नैसर्गिकः प्राणसंबन्धः - ।।४३।।

श्वास का आवागमन देह में,
है स्वभाववश ही चलता,
योगी रह कर निज स्वरूप में,
देह धर्म पालन करता ।।०।।

नासिकान्तर्मध्यसंयमात् किमत्र सव्यापसव्यसौषुम्नेषु - ।।४४।।

धर कर ध्यान, प्राण शक्ति के मध्य में,
चेतन रह योगी,
करें, भ्रमण वो हर नाड़ी में,
रहे स्वतंत्र श्रेष्ठ योगी ।।०।।

भूयः स्यात्प्रतिमीलनम् - ।।४५।।

ऐसा योगी अंतर में ही,
जग की स्थिति और लय देखे,
मल और भेद मिटे अंतर के,
स्वात्मानंद में लीन रहे ।।०।।

प्रार्थना

प्रेरक भी गुरू, लेखक भी गुरू,
सर्वज्ञान का सार गुरू,
गुरू बिन कुछ सूझे नहीं हमको,
जीवन का आधार गुरू ।।०।।

अधिष्ठात्री हैं चक्रों की,
आप ही चक्रेश्वरी गुरू,
शत सोपान पर, आप बिराजी,
स्वयं शारिका मात गुरू ।।०।।

परा से उतरी वैखरी में तो,
अक्षर मूर्तिमान हुए,
लिखे शब्द लेखनी, किन्तु,
उद्गार स्वयं हैं आप गुरू ।।०।।

माया का आवरण हटाऐं,
कंचुक पाश से मुक्त करें,
स्वात्म रसास्वादन हो प्रतिक्षण,
करें अनुग्रह आप गुरू ।।०।।

जय गुरूदेव